स्मृति से आगे.....
...एक दस्तावेज

तसल्लियों के इतने साल बाद अपने हाल पर
निगाह डाल, सोच और सोच कर सवाल कर

खोल पोटली छीन लयो तब
चुटकी—चुटकी खायो
राजा के हिस्से के चावल
दरबारी मिल खायो

जहां भी जाओ लीपा—पोती
जहा भी जाओ पोल
हर मानुष बिकने को राजी
जल्दी कीमत बोल

कृष्ण देख सके तो देख
सुदामा आयो मिलने को

'सुदामा का चावल' का शीर्षक गीत से.

स्मृति से आगे.....
...एक दस्तावेज

''हर चीज बदलती है
अपनी हर आखिरी सांस के साथ
तुम एक ताजा शुरुआत कर सकते हो।''

बर्टोल्ट ब्रेष्ट

लेखन

चित्रांकन और डिजाईन : यमुना सन्नी

सहयोग : ज्योति दीवान, ब्रजेश सिंह

संस्करण : 2001

प्रकाशन : एकलव्य, कोठी बाजार,
होशंगाबाद (म.प्र.)

मुद्रक : शांति प्रेस,
होशंगाबाद फोन नं. 53312

स्मृति से आगे...

'बालसमूह' के काम के कुछ साल बीत चुके हैं। मुख्य रूप में गाँवों में बच्चों की रचनाओं को उभारने में एक मंच ढूँढना और जगह बनाना–ये बालसमूह की कोशिश रही है। हर गाँव में बालसमूह संभालने वाले 2–5 लड़के –लड़कियां होते हैं। इनमें से कुछ लोग बड़े होकर काम में और परिवार की ज़िम्मेदारियों के कारण ये काम सक्रियता से कर नहीं पाते। लेकिन अगली पीढ़ी को तैयार करने में वे अक्सर सक्षम रहे हैं और बालसमूह की नयी कड़ी फिर उसकी निरन्तरता कायम रखती हैं।

ऐसे चलते–चलते लगभग 6 साल हुए हैं और बालसमूह में नये लोग भी जुड़े हैं। हमें बहुत बार लगता है कि इस प्रक्रिया पर खुद की और भागीदारों की आलोचना और दस्तावेजीकरण करने का महत्व होता है। इससे आगे का रास्ता और भी स्पष्ट हो जाता है क्योंकि यह कमियों को सुधारने और काम की दिशा तय करने के लिए एक मौका होता है। साथ–साथ नये जुड़े लोगों को इन प्रक्रियाओं पर एक नज़र डालने में और समझ बनाने में मदद मिलेगी।

बालसमूह में अनेक गतिविधियाँ चलती हैं और लोग अपनी–अपनी रूचि के अनुसार गतिविधियों में जुड़ जाते हैं। संभालने वाले लोग अपनी क्षमता के अनुसार गाँव में बच्चों को प्रोत्साहित करके, प्रशिक्षण देकर और उनकी रचना के लिए जगह देकर बालसमूह के कामों को आगे ले जाते हैं। यह पुस्तिका इनमें से एक गतिविधि, नाटक पर केन्द्रित है। पिछले कुछ समय से साल में दो बार बालसमूह की नाटक कार्यशालायें होती हैं। बालसमूह संभालने वाले युवा इनमें शामिल होते हैं।

पिछली कार्यशाला नवंबर 2000 में की थी। उसके पहले 2000 में गर्मी की छुट्टियों में *'सुदामा के चावल'* नाटक तैयार हुआ था। उसके तुरंत बाद हमने 'स्मृति' नाम से एक स्मारिका निकाली थी। उसमें नाटक

के बारे में, कार्यशाला के अनुभव, भागीदारों के अनुभव, सुझाव..... ये सब बातें शामिल थी। नवंबर की कार्यशाला में *'सुदामा के चावल'* को और भी बेहतर करके गांवों में इसका मंचन किया था। यह पुस्तिका 'स्मृति' से आगे एक कदम है।

इसमें हम बालसमूह की नाटक गतिविधि का विश्लेषण कर रहे हैं। इस प्रक्रिया में भागीदारी अलग–अलग कड़ी के रूप में एक साथ आ जाती है। दर्शक, पात्र, हम..... इन सब के अनुभव और सोच–विचार इस को कायम रखने में और टिकाऊ बनाने में महत्वपूर्ण हैं। हमारी उम्मीद है कि यह पुस्तिका बालसमूह संभालने वाले लोगों के लिए एक स्त्रोत पुस्तिका भी बने और साथ–साथ एक दस्तावेज भी बने। हमारे जैसे बच्चों के साथ काम करने वाले अन्य समूहों और व्यक्तियों के साथ संवाद के लिए भी हम इसको उपयोगी समझते हैं।

यमुना सन्नी, ज्योति दीवान, ब्रजेश सिंह

नयी शराब पुराने बोतल में!

आगे की चर्चा खासतौर पर नवंबर 2000 में हुई कार्यशाला और प्रस्तुति पर आधारित है। इसलिए उसके बारे में कुछ जानकारी यहां दे रहे हैं। हमारा नाटक श्री हरिशंकर परसाई के व्यंग्य *'सुदामा के चावल'*, पर आधारित था; जून 2000 की कार्यशाला में इसे तैयार किया था। लेकिन नवंबर में उसे पुनः करवाने के लिए हम लोग जब इकट्ठा हुए तब अचानक बहुत सी चुनौतियां सामने आयी थीं। मुख्य पात्र, सुदामा और कृष्ण कार्यशाला में शामिल नहीं हो पाये। इसके अलावा सूत्रधार भी आ नहीं पाया। पिछली बार नाटक में जिन लोगों को छोटे–छोटे पात्र बनाये थे, उन सबको प्रमुख पात्र बनाना पड़ा। हमारी टीम की पांच–छः लड़कियां भी शामिल नहीं हो पायीं। इसके पहले भी हमारा यह अनुभव रहा है कि गर्मी की छुट्टियों में जो सक्रिय भागीदारी होती है वो नवंबर में नहीं दिखती। इसके अनेक कारण हैं, पढ़ाई संबंधित और खेती संबंधित बातें इनमें प्रमुख हैं।

खैर, नाटक को पुनः बनाने में हम सभी लोगों ने खासतौर पर हमारे दोस्त जॉनी कुट्टी (नाटक निर्देशक) ने काफी मेहनत और सोच डाला। हमारे साथी राजेश विश्नोई (संगीत निर्देशक) ने कई नये गाने इसमें शामिल किए। पिछली कार्यशाला में संगीत की कमियों (गाने वाले लोग बहुत ही कम थे) को समझकर इस बार पोथिया–सोनतलाई की भजन मण्डली के लड़कों को हमने एक नयी संगीत टीम के रूप में शामिल किया। कुल मिलाकर दो दिन में क्या–क्या तैयार हुआ? हमें यह बोलना चाहिए–नयी शराब पुरानी बोतल में! वही स्थिति बनी थी।

नाटक कुछ इस प्रकार था:

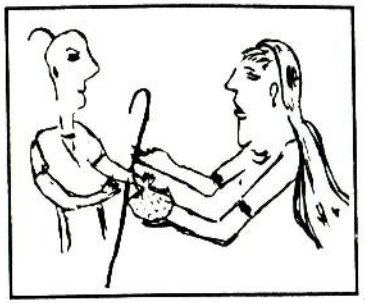

सुदामा अपने बचपन के दोस्त कृष्ण से मिलने के लिए निकल रहे हैं। कृष्ण को देने के लिए उनकी पत्नी पड़ोसिन से एक मुट्ठी चावल लाकर उसको दे देती है। सुदामा नाव में बैठकर पूरी यात्रा का मजा लेकर नदी पार करते हैं।

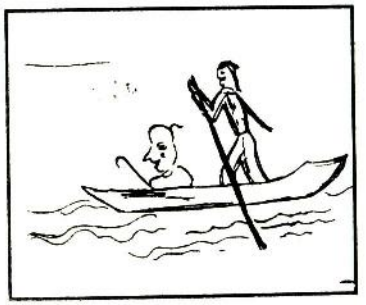

सुदामा एक किसान से द्वारिका का रास्ता पूछते हैं। रास्ते में उन्हें एक शिल्पशाला और एक बगीचा मिलता है। फिर लोगो ने जैसे रास्ता बताया था वैसे ही सुदामा एक बड़े महल के सामने पहुंचते है जिस पर लिखा था "श्रीकृष्ण पैलेस"। वहां पुताई वाले आदमी से उनकी बातचीत होती है। तभी एक कर्मचारी महल से बाहर निकलता है। वो

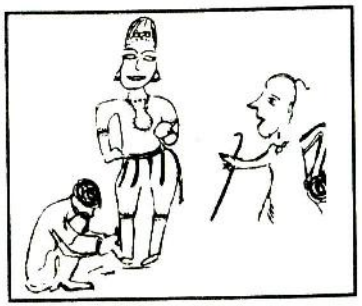

सुदामा से बहुत घमण्ड के साथ ऐसे बात करता है "यहां के किसी भी कर्मचारी को भाई मत कहना। हम राज कर्मचारी है, हमें देवता कहना"। महल के अन्दर उन्हें तीन कर्मचारी सोते हुए मिलते हैं।

वे लोग नींद से उठकर सुदामा की खूब मजाक उड़ाते हैं। उनके हाथ में चावल की पोटली देखकर कर्मचारी उनकी और भी हंसी उड़ाते हैं। लेकिन इन लोगों को शक होता है कि चावल

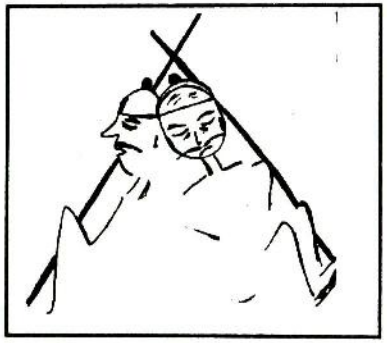

कुछ तंत्र–मंत्र से सिद्ध किये हैं। सुदामा इस मौके का फायदा उठाकर उन लोगों को चावल के गुण बताते हैं। फिर ये लोग उनके हाथ से चावल छीनकर खाते हैं। थोड़ी देर बाद अधिकारी भी वहां पहुंचकर पोटली में बचे हुए चावल खा जाता है।

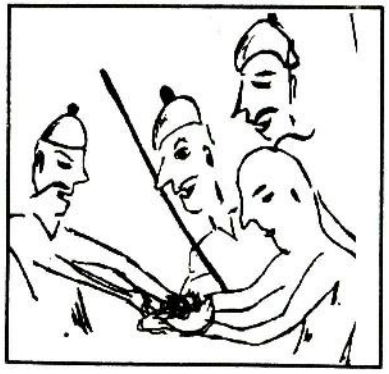

सुदामा को महल के अन्दर जाने की अनुमति मिलती है। बहुत दिनों बाद कृष्ण से मिलकर वह बहुत खुश होते हैं। राज दरबार में बैठकर दोनों लोग बातें करते हैं।

सुदामा बोलते है, "आपके दरबारी मेरे हाथ से चावल तक छीनकर खा गए! तुम राज करते हो या सोते रहते हो?"

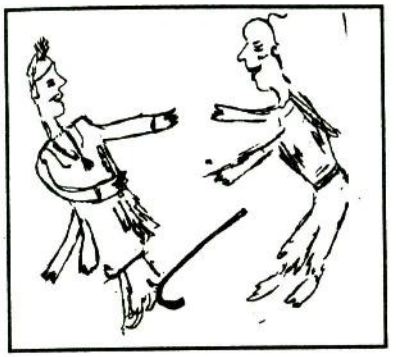

कृष्ण : "इस स्थिति का न तो मैं दोषी हूं और न ही मेरे दरबारी। तुम इस बात को बाहर जाकर किसी को मत बताना।" सुदामा : "पर मै झूठ नहीं बोलूंगा। यह बात बाहर जाकर लोगों को बताऊँगा।"

फिर कृष्ण सुदामा से सौदा करते हैं। उसको आलीशान बंगला, बैंक में पैसा, जीवन भर की सुरक्षा और राजपुरोहित का पद देने का वादा करते हैं। सुदामा : "हे कृष्ण! राजनीति तो कोई तुमसे सीखे!"

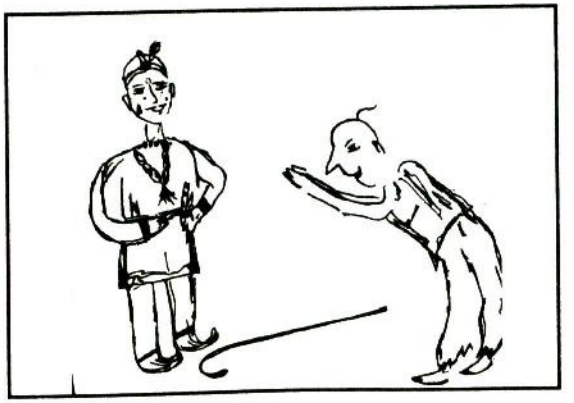

दर्शक बने भागीदार

दर्शक बने भागीदार

इस बार हमने दस जगहों पर नाटक दिखाया। इनमें दो प्रस्तुतियां होशंगाबाद शहर में बाकी सभी आसपास के गाँवों में थी। इनमें टुगारिया, रोहना, बैराखेड़ी, भीलाखेड़ी, आमुपुरा, सतवासा, शेल और निटाया गांव शामिल थे। लगभग सभी जगह नाटक के बाद लोगों से हमने अनौपचारिक बातचीत की थी। लोगों को नाटक कैसा लगा? नाटक की बातें कहाँ तक दर्शकों तक पहुंचा पाये? दर्शकों के मन में क्या सवाल थे? इन बातों पर हमारी जिज्ञासा थी और बातचीत के जरिये हमने जानने की कोशिश भी की। इसके अलावा कुछ दिन बाद बैराखेड़ी के हमारे साथी, विनोद मालवीय ने अपने गांव में इस नाटक पर एक चर्चा रखी थी, वह भी इस में संलग्न है।

बातें बहुत अलग–अलग तरह की हुई थी। बच्चों ने और बड़ों ने अपने विचार और सुझाव हमारे सामने रखे थे। नाटक की भूमिका से लेकर उस पर दर्शाये मुद्दे और प्रस्तुति तक के बारे में बातें हुई। अनेक जगहों पर लोगों ने सहयोग के रूप में पैसे और सम्मान के रूप में नारियल दिये थे, कहीं–कहीं स्कूल के शिक्षकों ने औपचारिकता के साथ ये सब निभाया था। उदाहरण के लिए भीलाखेड़ी, रोहना और होशंगाबाद। रोहना में ग्राम सेवा समिति संस्था की ओर से सभी बच्चों को नोट–बुक और कलम दिये थे । कई बार ये सीधे हमारे सुदामा के हाथ में ही दिये जाते थे। आमुपुरा गांव में एक बच्चे ने नाटक के बीच में मंच पर आकर सुदामा को एक बिही (अमरूद) दे दी थी। शायद हमारे सुदामा की गरीब स्थिति देखकर उस छोटे बच्चे में यह भाव आया होगा! कुछ गांवों में जहाँ (रोहना और शेल गाँव) बालसमूह का काम नहीं चल

रहा है वहां लोगों ने यह मांग रखी कि उनके गांव में भी बच्चों के लिए इस तरह की गतिविधियां करने की कोशिश होनी चाहिए। कभी–कभी नाटक के प्रति श्रद्धा रखने वाले लोग अन्य जगहों से भी इसे देखने आये थे। ऐसे ही एक व्यक्ति इटारसी से होशंगाबाद पहुंचे थे, उन्हें समाचार पत्र से नाटक प्रदर्शन के बारे में जानकारी मिली थी।

नाटक और समाज

नाटक के बारे में जब बात शुरू हुई तो बहुत बार बुजुर्गों ने एक सांस्कृतिक खालीपन के बारे में चिन्ता व्यक्त की। उनका यह कहना था कि आज की पीढ़ी की यह खासियत है। पहले ज़माने में, जब ये लोग बच्चे थे या युवा थे, तब गांव में सभी लोगों का मिलकर गाना, नाचना और नाटक करना बहुत आम बात थी। बैराखेड़ी में हमारे साथी लखन सिंह के पिताजी ने इस पर विस्तृत चर्चा की। उनके खुद के अभिनय के अनुभव को भी उन्होंने याद किया। लेकिन गांव में इस तरह की गतिविधियों का खालीपन आजकल नजर आता है। इस पीढ़ी में आकर गांव के बाहर की ओर, यानी शहर की ओर ही काम की दिशा दिखती है, शायद यह भी इस स्थिति का एक कारण हो सकता है। उनका कहना था कि इस संदर्भ में बालसमूह जैसी कोशिशों का महत्व है। ''हम जरूर चाहते हैं कि हमारे बच्चे सक्रिय बने नाटक में गुंजाईश बहुत है। हर उम्र के हिसाब से नाटक तैयार किया जा सकता है– जैसे छोटे बच्चों के लिए 'हास्य नाटक'।

जहां तक इस पीढ़ी की सांस्कृतिक जरूरतों की बात है निटाया की सुश्री गीता श्रीवास्तव का यह कहना है कि खालीपन

की बातें सही हैं। ''टेलीविजन के अलावा कोई और तरीके दिखते ही नहीं।'' निटाया गांव में जब नाटक शुरू किया था तब अंधेरा होना शुरू हुआ था। नाटक के बीच में बिजली चली गयी। किसानों ने दो–तीन बड़े टॉर्च जलाकर नाटक को जारी रखने की कोशिश की जा रही थी। तभी हुई आपसी बातों में गीता बहनजी ने बताया कि गांव में आज मनोरंजन और विचार रखने के लिए कोई माध्यम नहीं है। इसलिए वे इस तरह की कोशिशों को चाहती हैं और स्वीकार करती हैं। उन्होंने कहा कि समाज से जुड़े मुद्दों पर इस तरह की और भी कोशिश होनी चाहिए। ऐसे ही होशंगाबाद के डॉ. एनीबेसन्ट स्कूल की प्राचार्या मैडम दत्ता का कहना था कि इस तरह के मुद्दों पर नाटक करने से बच्चों की मूल्यों के प्रति श्रद्धा और चर्चा बनने की संभावना बढ़ती है।

गांवों में थोड़ा पढ़ने–लिखने वाले लोग और शिक्षक श्री हरिशंकर परसाई की किताबों से परिचित थे। कुछ जगह शिक्षकों ने इस बात पर खुशी प्रकट की कि परसाई जी के व्यंग्य को नाटक के लिए चुना। टुगारिया और सतवासा स्कूल के शिक्षक लोग इसमें प्रमुख हैं। शेल गांव के स्कूल के शिक्षक ने आमुपुरा में संयोग से नाटक देखा। उन्होंने अगले दिन शेल गांव में प्रदर्शन करने के लिए हमें आमंत्रण दिया। शेल में कुछ समय पहले गांव वालों ने चुनाव का बहिष्कार किया था। लोगों का यह कहना था कि उनके गांव में सुविधाओं को मुहैया कराने की कोई भी कोशिश नहीं होती है और वे किसी को चुनाव में जिताने की दिलचस्पी नहीं रखते हैं। भ्रष्टाचार पर केन्द्रित परसाई जी का व्यंग्य गांव वालों को बहुत पसंद आया। नाटक के बाद कुछ बुजुर्ग लोगों ने वास्तविकता पर नाटक को टिकाये रखने की कोशिश पर बात रखी। उनका कहना

था कि हमारे देश की इस तरह की वास्तविक स्थिति पर संवाद बनाकर नाटक ने अच्छी भूमिका निभायी।

प्रस्तुति की बातें

कुछ बातें प्रस्तुति पर भी केन्द्रित थी। अभिनय, दृश्य, संगीत बगैरह पर लोगों ने अपनी प्रतिक्रियायें बतायी, प्रदर्शन की अच्छाईयां और बुराईयां हमारे सामने रखी थी। कहीं–कहीं पिछली बार के नाटक से इसकी तुलना भी की गयी। इस बार टीम में लड़कियां शामिल नहीं हो पाई, उस बारे में अलग–अलग लोगों ने इंगित किया। उस मामले में पहले की प्रस्तुति में जो संतुलन होता था, उसकी कमी इस बार मंच पर जरूर दिख रही थी।

प्रस्तुति के बारे में विस्तृत चर्चा बैराखेड़ी में हुई थी। जिसको हम नीचे दे रहे हैं–

विनोद : नाटक आपको कैसा लगा?

वीरेन्द्र (21 वर्ष): नाटक हमें बहुत अच्छा लगा, खासतौर पर सुदामा का अभिनय।

सुरेन्द्र, रोहित, रामेश्वर : वह बिल्कुल सुदामा ही लग रहा था।

रोहित : मुझे बैल–बक्खर वाला दृश्य भी अच्छा लगा। उसकी मूंछ भी अच्छी जमी थी। किसान की तरह ही वह सब कुछ कर रहा था।

प्रकाश : कृष्ण बने चम्पालाल भैया का नाम हम जानते थे क्योंकि विनोद भाई के घर में बालसमूह के कैलेन्डर में उनका नाम देखा था।

मनोज सिंह (26 वर्ष) : नाटक में बहुत अच्छे दृश्य थे। नाव वाले दृश्य को देखकर ऐसा लगता था मानो सही में नाव पानी में

चल रही है। सुदामा नाव में प्रवेश कर हाथों से जल को मुंह पर उछालते हैं, वह बहुत सुंदर दृश्य था।

प्रीति (16 वर्ष) : मुझे नाटक का वह दृश्य अच्छा लगा जब कृष्ण आसन पर बैठते हैं और नृत्य देखते हैं। नाटक में सभी कलाकारों का अभिनय अच्छा लगा।

वीरेन्द्र : नाटक में संगीत भी अच्छा लगा।

दीपक (20 वर्ष) और विनोद की मम्मी : नाटक की बातों को और अधिक समझाने में संगीत ने बहुत मदद की।

सुमन बाई (30 वर्ष) : यह सही बात है। नाव वाला दृश्य जब शुरू होता है तो "हो–हो...." वाली धुन से ही मैं समझ गयी थी कि यह नाव वाली बात है।

प्रीति : कृष्ण के सामने गीत शुरू होता है, "प्यारो बनो दरबार रे....." वह मुझे बहुत अच्छा लगा।

पूरनलाल यादव : नाटक के अंत में परसाई जी और उनके व्यंग्य 'सुदामा के चावल' के बारे में जानकारी दी थी, वह बहुत जरूरी और मददगार रही।

मनोज सिंह : गांव में लोगों को जाग्रत करने में और प्रेरणा देने में इस तरह के नाटक से अच्छा काम हो सकता है।

मनोज सिंह : पिछली बार मैंने आप लोगों का नाटक सेठानी घाट पर देखा था। वह प्रस्तुति भी ठीक थी, पर उतनी रोचक नहीं थी। इस बार नाटक में बहुत सुधार आये हैं। इसका कारण बहुत से दृश्य परिवर्तन करने का और संगीत पक्ष में तब्दीली करने का रहा। उम्मीद है कि आगे भी ऐसे कार्यक्रम हमारे गांव में होते रहेंगे।

विनोद : इस नाटक में क्या–क्या कमियां थी?

पूरनलाल : लड़कियों का अभिनय कुछ लड़कों ने ही किया, वो कुछ जम नहीं रहा था।

रानू (15 वर्ष) : नाटक में लड़कियां होतीं तो ज्यादा अच्छा रहता।

चित्रा (13 वर्ष) : नाच वाले दृश्य में लड़कियां ही होना चाहिए था।

विनोद : इस बार हमारे साथ लड़कियां शामिल नहीं हो पायीं, वह कमी रही। लेकिन उस स्थिति में नाटक में जरूरी महिला पात्रों का अभिनय लड़कों को ही करना पड़ता है।

सुमित : नाटक में नाव बनायी थी वह मुझे अच्छी लगी क्योंकि मैं कागज की नाव बनाकर पानी में चलाता हूँ।

जगदीश : मुझे पूरा नाटक अच्छा लगा। उसके कुछ दृश्य हम लोग स्कूल की छुट्टी होने पर करते हैं और हमको बहुत मजा आता है।

(बैराखेड़ी में लोगों के साथ विनोद मालवीय ने चर्चा की थी)

पाज बने भागीदार

पाज बने भागीदार

इस बार कार्यशाला में कुछ नये लोगों को संगीत के लिए शामिल किया गया था। अभिनय करने वाले लगभग सभी पुरानी कार्यशालाओं से हमारे साथ जुड़े लोग थे। लेकिन इन सब को नये पात्र बनाना पड़ा। साथ–साथ चार–पांच नये लोग भी शामिल थे। आठ दिन की कार्यशाला में दो दिन नाटक तैयारी के लिए और बाकी दिन प्रदर्शन के लिए रखे थे। जॉनी कुट्टी अनेक नये दृश्य मन में सोच कर आये थे। दो दिन में सभी मुख्य पात्रों को नये लोगों द्वारा तैयार करना (जो पिछली कार्यशाला में कुछ और पात्र बने थे) पड़ा। जबकि पिछली बार एक ही शीर्षक गीत का अलग–अलग भाग पूरे नाटक में संगीत की भूमिका निभा रहा था इस बार संगीत पक्ष में काफी नयापन आया। तीन–चार नयी धुन और गीत डाले गये। राजेश विश्नोई को काम करने के लिए इस बार एक अच्छी संगीत टीम मिली थी। पिछली बार की तुलना में यह बहुत बड़ी उपलब्धि थी। इस प्रकार अनेक चुनौतियां और उपलब्धियों को साथ में लेकर पूरी टीम ने मिलकर काम किया।

हमारी टीम में 14–15 साल से लेकर 20–25 साल तक की उम्र के लोग शामिल थे। ये सभी अलग–अलग गांवों में बालसमूह संभालने वाले लोग थे। मुख्य रूप से होशंगाबाद केन्द्र से चलने वाले बालसमूह के ही लोग थे। पर साथ में राजेश विशनोई ने अपने इलाके, खातेगांव केन्द्र से चलने वाले बालसमूहों से भी कुछ लोगों को इस प्रक्रिया में शामिल किया। इन लोगों के लिए यह नया अनुभव था। इस प्रकार एकदम नये लोग, पुराने साथी, स्कूल में पढ़ने वाले, कॉलेज में पढ़ने वाले, कहीं नहीं पढ़ने वाले, काम करने वाले, पहली बार गांव से निकलने वाले..... सभी इस टीम में शामिल

थे। 30 नवंबर 2000 को नाटक के पूरे प्रदर्शन हो चुके थे। अगले दिन हम सभी लोग अनौपचारिक रूप से कार्यशाला के अनुभव और इस प्रक्रिया पर विचार करने लगे। इसमें कार्यशाला के सभी भागीदार और हम शामिल थे। लोगों ने अपने अनुभव, सुझाव और आगे की उम्मीदें व्यक्त की।

रमेश दुबे चारूवा के बाल समूह से जुड़े हैं। नाटक कार्यशाला का उसका यह पहला अनुभव था। उसने अपने मन की बातें ऐसे बतायी, "नाटक कार्यशाला में मेरा यह पहला मौका था। पहले दिन तो मुझे बहुत बुरा लग रहा था। यहां पर हमारे सिवा कोई नहीं था। हम सोच रहे थे कि हम यहां कहां आ गये? धीरे–धीरे सभी का आना हुआ, उनसे हमारा परिचय हुआ यहां पर ज्योति दीदी, यमुना दीदी व ब्रजेश भाई से हमारा परिचय हुआ। उनसे मिलकर हमें बहुत अच्छा लगा। उसके बाद हमने नाटक की रिहर्सल की हमें नाटक करने में बहुत मजा आया। हम सोच रहे थे कि हमें जो पात्र की भूमिका निभानी हैं वह हम कैसे निभा पायेंगे? पर जॉनी भाई ने इस काम को बड़ी आसानी से हमें सिखाया। उसके बाद हमने इस नाटक को गांव–गांव जाकर दिखाया। संगीत के साथ हमें नाटक करना बहुत अच्छा लगा। सभी दोस्तों से हमें भाई जैसा प्यार मिला, सात–आठ दिनों के बाद भी हमें यह नहीं लगा कि हम घर से दूर हैं। हमें यहां सब अपना सा लगा। राजेश भाई से हमें संगीत सीखने का मौका मिला। अंतिम दिन मुझे बुरा सा लग रहा था। पता नहीं कि इन दोस्तों से कब मिलना होगा उनका प्यार हमें बहुत याद आता रहेगा। इसके पहले मैं स्कूल में नाटक किया करता था। पर वह बहुत अलग तरह का रहता था। इस कार्यशाला में नाटक का हर पहलु हमें सीखने को मिला–बातचीत, संगीत बगैरह। यहां

दोस्ती और भाईचारे के माहौल में मुझे एकदम अपनापन लगने लगा।

मुन्ना, दुर्गा, और छोटे मोरगढ़ी गांव से आये थे। गांव के बाहर इतने दूर आना ही उनके लिये पहला अनुभव था। मुन्ना ने बताया, "मेरा नाटक का यह पहला अनुभव अच्छा रहा। हमारे गांव में भी नाटक करने की कोशिश करूंगा। आगे भी इस तरह के कार्यक्रम में हम आना चाहेंगे"। दुर्गा ने भी लगभग इसी तरह की बातें बतायी। छोटे ने यह बतायी कि इस अनुभव से वह बहुत खुश हुआ।

राजेश भी चारूवा से आया था। उसका भी यह पहला अनुभव था। उसका कहना था कि लोगों के अन्दर की प्रतिभा उभारने का यह एक अच्छा मौका बना। साथ–साथ सभी लोगों से अच्छी दोस्ती भी बनी। इस प्रकार सभी लोग मिलकर टीम में रहने का अच्छा अनुभव हुआ। उसने कहा, "हम आगे भी जुड़े रहना चाहेंगे। ऐसे अनुभवों के साथ अन्य लोगों को मैं शिक्षा देना चाहूँगा"।

बागड़ातवा से आया गुंजन हमारी टीम में सबसे कम उम्र वालों में से है। नाटक कार्यशाला का यह उसका भी पहला अनुभव था। उसने बताया कि उसे बहुत सीखने को मिला और पहली बार आया है, ऐसा महसूस नहीं हुआ। "हमारी झिझक दूर हो गयी।" उसका यह मत था कि बालसमूह के गांवों के अलावा भी जितना हो सके, उतना आसपास के गांवों में नाटक दिखाना चाहिए।

संगीत टीम में एक–दो लोगों को छोड़कर बाकी सभी नये थे और ज्यादातर लोग पोथिया और सोनतलाई गांवों के थे। जयप्रकाश ने कहा, "संगीत टीम के पास खुद का सामान होना चाहिए, यानी हॉरमोनियम और अन्य वाद्ययंत्र। अभी हमने नुक्कड़ नाटक किया

था। कभी–कभी मंच के नाटक भी करके देखना चाहिए।'' रामभरोस का कहना था कि दोस्ती का माहौल रहने से काफी फायदा हुआ था। वह आगे भी इस कार्यक्रम से जुड़े रहना चाहता है।

अमर सिंह ने बताया कि गांव में मण्डली से जुड़े रहने से संगीत में उसका अनुभव खूब रहा है। लेकिन नाटक में यह पहला जुड़ाव है। ''यहां सभी साथियों का व्यवहार अच्छा रहा। नाटक में लड़कियां नहीं होने की कमी जरूर रही है।'' अमित दीवान ने बताया, ''भ्रष्टाचार और शोषण की बातें हमने नाटक में दिखायी थी। हमको खुद भी इससे प्रेरणा मिली है। नाटक के माध्यम से और उसके बाहर भी हम समाज में कुछ करना चाहते हैं।'' विनोद मालवीय, जो बैराखेड़ी का पुराना साथी है, ने बताया, ''पहले मुझे गाने में बहुत झिझक हो रही थी, जो इस कार्यशाला में मिट गई। नाटक में नये पात्रों को तैयार करने की जरूरत इस बार पड़ी थी, इसके बाबजूद पिछली बार की तुलना में इस बार का नाटक बेहतर रहा है।''

जवाहर नाईक महेन्द्रबाड़ी बालसमूह से जुड़े हैं। उसने कहा कि कार्यशाला से सबसे बड़ा फायदा यह था कि अभी खूब भीड़ के सामने नाटक करने में उन्हें कोई डर नहीं लगता। पोथिया के अशोक मेहरा ने जोड़ा कि अन्य जगहों में भी इस तरह का कोई कार्यक्रम हो तो वह जरूर भाग लेना चाहेगा। टुगारिया का दिलीप मेहरा अपने गांव के बच्चों को नाटक गतिविधियाँ सिखाने की उम्मीद रख रहा था। उसने यह भी कहा कि मोरगढ़ी से पहली बार बाहर निकलकर इस तरह की गतिविधियों में शामिल होने वाले दुर्गा और उसके दोस्तों से मिलकर उसको काफी खुशी हुई।

चंपालाल कुशवाहा हिरनखेड़ा में बालसमूह संभालने वाला हमारा पुराना साथी है। उसका कहना था कि संगीत और नाटक

का अच्छा जुड़ाव रहा और इस कार्यशाला का यह महत्वपूर्ण अनुभव है। जब हिरनखेड़ा में ये लोग खुद बच्चों से नाटक करवाते हैं तब संगीत पक्ष हमेशा कमजोर ही रहा है। ''जॉनी और राजेश के साथ अच्छा अनुभव रहा। मेरे अभिनय में कमियां थीं, इसके पीछे मुख्य बात यह रही कि यहां रहकर भी मैं गांव की ज़िम्मेदारियों से मानसिक रूप से मुक्त नहीं हो पाता। स्कूल की (चंपालाल अपने गांव में स्कूल चलाता है) और अन्य जिम्मेदारियों की याद आती है।'' उसका इस टीम के लिए सुझाव था कि दरी, कपड़े जैसे सामान को ठीक से रखने की ज़िम्मेदारी सभी लोगों को निभाना चाहिए। एक बार नाटक दिखाने गये तब दरी और परदा यहां भूल गये थे जिससे नुकसान हुआ था। सभी भागीदारों को इस तरह की ज़िम्मेदारियां को उठाने में और सक्षम होना चाहिये।

हिरनखेड़ा के राकेश मालवीय ने भी ज़िम्मेदारियों को लेकर अपने विचार रखे। ''हॉल की साफ–सफाई में थोड़ी और सक्रियता से कार्य करना चाहिए। इस बार मैं खुद इन कामों में बहुत सक्रिय नहीं रह पाया क्योंकि अचानक अनिल चौधरी जिसने (पिछली बार सुदामा का पात्र किया था) के बीमार पड़ने पर मुझे सुदामा का पात्र करना पड़ा। मेरा पूरा मन उसमें लगा था कि उसका पात्र मैं अच्छे से करूं।'' उसने नयी संगीत टीम के साथ काम करने के अच्छे अनुभव पर भी ध्यान दिलाया। ''जॉनी भाई का हमेशा बोलना है कि नाटक को और बेहतर करना है और राजेश भाई का इस कार्यशाला में पूरे समय में रहने से हमें बहुत फायदा मिला।'' इसके अलावा दिलीप की ''कॉमेडी'' प्रस्तुति की भी राकेश ने तारीफ की। इसके बारे में विस्तृत जानकारी हम नीचे दे रहे हैं :

द्वितीय शो

नवंबर 30 को योजना अनुसार सभी नाटक प्रस्तुतियाँ हो चुकी थी। आठ दिन की काफी भाग दौड़ और मेहनत के बाद सभी को अचानक बैठ जाना अजीब महसूस हो रहा था। उस रात को दिलीप ने राकेश के साथ मिलकर कुछ योजना बनायी। दिलीप हमारी टीम का 'कॉमेडियन' है, हर कार्यशाला में सभी को हंसाने की और माहौल रोचक बनाने की उसकी भूमिका रहती है। दिलीप और राकेश ने मिलकर पूरे नाटक को हमारे सामने प्रस्तुत किया था। इसमें खास बात यह है कि सिर्फ दो लोगों ने मिलकर 15–16 लोगों की भूमिका निभायी। सुदामा का पात्र दिलीप ने किया था। दिलीप के बोलने के तरीके का लोगों ने खूब मजा लिया और खूब हंसे। इन लोगों को नाटक का पूरा क्रम और बातचीत याद रही। यह दो–आदमी शो सिर्फ *"सुदामा के चावल"* का नहीं रहा। इन लोगों ने पिछली कार्यशालाओं के हर नाटक को इसी तरीके से दिखाया। हम सब को लगा कि यह एक मजेदार प्रयोग रहा।

(पोथिया के खेत सिंह उईके और महेन्द्रवाड़ी के बालाराम नाईक अपनी बातें नहीं रख पाये क्योंकि हमारी चर्चा के समय कुछ ज़रूरी काम से उनको बाहर जाना पड़ा)

हम बने भागीदार

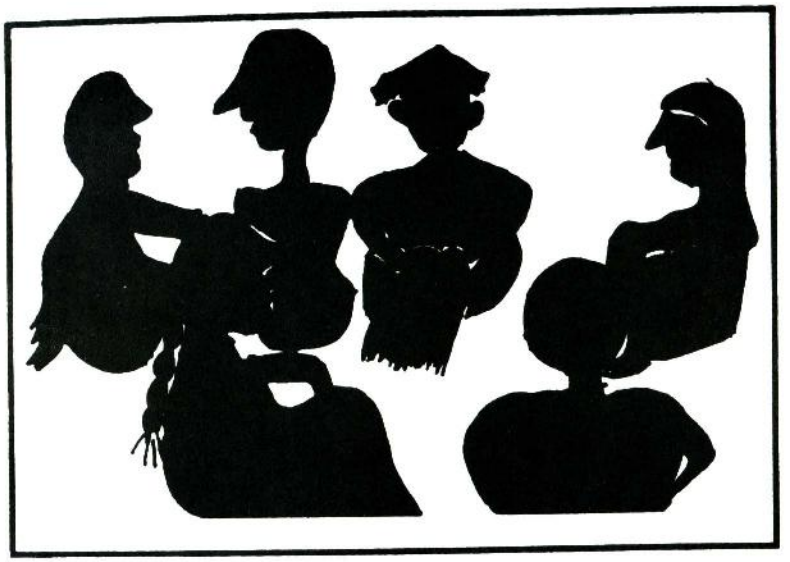

हम बने भागीदार

नवंबर 2000 में बालसमूह की चौथी नाटक कार्यशाला हुई थी। शुरूआत में मुख्य रूप में 'इंप्रोवाइजेशन' का काम ही चल रहा था। समाज में महिला बराबरी को लेकर दो नाटक इसी प्रकार तैयार हुए थे और उनकी अनेक प्रस्तुतियां भी हुई थीं। गौरी डे जो दिल्ली के 'प्रतिध्वनि' समूह से जुड़ी हैं, के निर्देशन में किये। उस कार्यशाला में पहली बार नाटक करने वाले लोगों के लिए बुनियादी प्रशिक्षण हुआ था। नाटक की क़हानी लिखने से लेकर अभिनय करने और एक–दूसरे को सुझाव और टिप्पणी देने में भागीदार सक्रिय थे। गाना और धुन भी इन लोगों ने खुद बनायी थी। संगीत प्रशिक्षण में होशंगाबाद के 'वागेश्वरी' समूह की जयश्री तरडे और जया नर्गिस की काफी भूमिका रही। अपने गांव की स्थानीय बोली के इस्तेमाल से नाटक रोचक लगे और उनमें स्वाभाविकता नजर आयी। दूसरी कार्यशाला में इनमें से सिर्फ एक नाटक को पुनः तैयार करके गांवों में दिखाया गया था।

तीसरी कार्यशाला में बनी–बनायी स्क्रिप्ट पर काम करने की कोशिश की थी। परसाई जी के व्यंग्य *'सुदामा के चावल'* को नाटक के रूप में लिखने में होशंगाबाद के शैलेश राय की भूमिका रही। शैलेश राय होशंगाबाद की नाटक गतिविधियों में जुड़े रहे हैं। इस बार के नाटक का निर्देशन जॉनी कुट्टी का रहा जिनका केरल में नाटक का लंबा–चौड़ा अनुभव है और बाद में दिल्ली के 'प्रतिध्वनी' समूह से भी जुड़े रहे। संगीत तैयारी के लिए राजेश विश्नोई हमारे साथ थे। राजेश संगीत में बहुत रूचि रखते हैं, साथ ही नाटक में और बच्चों के साथ काम में उनकी काफी रूचि और अनुभव है। कार्यशाला में हरदा से चन्दन यादव भी शामिल थे।

प्रापर्टी बनाने में, पोस्टर तैयार करने में और नाटक के प्रचार–प्रसार में उनकी काफी भूमिका रही। चन्दन मूलतः चित्रांकन और लेखन में काफी रूचि रखनेवाले साथी हैं। इसके अलावा इप्टा की होशंगाबाद इकाई से जुड़े महेश बसेड़िया और संजय श्रोतीय की मदद भी हमें मिली थी। भागीदारों को सुबह कसरत करवाने में और नाटक के लिए लोगों को सजाने के काम में सोनू शर्मा की भूमिका काफी रही। इस प्रकार अनेक लोगों के योगदान से विकसित हुई यह कार्यशाला हम सभी लोगों को सीखने के लिए काफी कुछ प्रदान कर गयी।

इस कार्यशाला का अगला कदम था 2000 नवंबर की कोशिश। जब कि पिछली कार्यशाला में नाटक तैयारी मुख्य बात थी, इसमें नाटक की प्रस्तुति मुख्य मुद्दा था। जैसे पहले ही बताया था इसमें चुनौतियां काफी थी, लेकिन उनका सामना करने में हमारे साथ भागीदारों ने भी पूरा सहयोग और मेहनत की थी। इससे हमें बालसमूह के शुरूआती समय की याद आती है जब हर एक छोटा काम हमें खुद करना पडता था। आज वह स्थिति बहुत बदली है। जिम्मेदारियों का बंटवारा बहुत होता है। कुल व्यवस्था से लेकर समाचार पत्र में विज्ञप्ति और रिर्पोट देने तक के काम में ये लोग आज सक्षम हैं। एक–दूसरे का ख्याल रखना भी इसमें शामिल है। पिछली कार्यशाला में कुछ लोगों के अनुभव ऐसे थे कि वे महत्वपूर्ण 'रोल' के पीछे पड़ जाते थे और उसके लिये रोने से लेकर बुरा मानने और आपसी टकराव भी दिखता था। लेकिन वह दौर आज गुजर गया, ऐसा महसूस हो रहा है।

हमारा यह अनुभव रहा है कि बातचीत और चर्चा के द्वारा ऐसी बहुत सी दिक्कतों से हम बाहर निकल सकते हैं। ऐसी टीम में काम करते वक्त समाज के विश्वासों की जटिलता, लड़के–लड़कियों

के आपसी रिश्ते, समूह में काम करने का मकसद.... ये सब कहीं–कहीं उभरकर आते हैं। टीम के अनेक लोग किशोर अवस्था के थे, न बच्चे, न बड़े। उस उम्र मे चुनौतियां भी सामने आती थी जो कि स्वाभाविक है। एक लड़के को अपने ऊपर 'देवी' आती थी। और फिर उसका निशाना एक लड़की होती थी और हर बार यही तरीका चलता था। इसको अलग करना और डरी हुई लड़की का डर खत्म करने में हमारी भूमिका रही। मजेदार बात यह है कि ऐसे मौके पर पूरी टीम तीन टुकड़ों में हो जाती थी विश्वास रखनेवाले (जिनके पास इस तरह की और भी घटनाएं होती थी, बताने के लिये), विश्वास नहीं रखनेवाले और चुप रहनेवाले। लेकिन खासतौर पर छोटे बच्चों के लिये इस घटना से डर का एक माहौल पैदा हो जाता था। इस लड़के को बाद में हम कार्यशालाओं में भाग लेने के लिए नहीं बुलाते है। इस मुददे पर आज भी बालसमूह संभालने वालों और हमारे बीच में बातचीत चलती रहती हैं। बातचीतों का असर कहां तक पहुंच पाया, वो बताना हमें भी मुश्किल लगता है। यह सवाल व्यापक मान्यताओं का है और उस सवाल का सामना करने की हमारी कोशिश कुछ अधूरी रह गई है।

ऐसे कामों में यह जरूरी होता है कि हर बच्चे/युवा की क्षमताओं पर विश्वास रखें और उन्हें आगे लाने का मौका दें। यह बात इसलिए और महत्वपूर्ण है कि सभी की उम्र, अनुभव, पढ़ाई और घर की स्थिति.... में फर्क है। यह सही है कि हर व्यक्ति अभिनय अच्छे से नहीं करता। लेकिन कुल ज़िम्मेदारी लेने में, रिर्पोट लिखने में या संगीत में वो रूचि रखता है। तो कुल मिलाकर टीम में अनेक क्षमताओं को मिलाकर काम हो जाता है। इस कार्यशाला में हमने ऐसे लोगों को शामिल नहीं करने की कोशिश की जिनकी नाटक और संबन्धित गतिविधियों में बिलकुल रूचि नहीं

है। इसमें हमारे साथ काफी समय से जुड़े कुछ स्रोत व्यक्ति भी है जो खुद मानते हैं कि उनकी रूचि कहीं और है। उस रास्ते में आगे जाने के लिए उन्हें प्रशिक्षण देना चाहिये, जिस बात को हम भी मानते हैं, वे भी मानते हैं।

वास्तव में हम कोई पूर्णकालीन नाटक समूह नहीं है। हमारे अन्य अनेक कामों के साथ 'बालसमूह' के ढ़ॉचे के अंदर यह एक छोटा प्रयोग और कोशिश है। हमारी संस्था का मुख्य काम स्कूली शिक्षा पर केन्द्रित है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि इस तरह के काम संस्था के मुख्यधारा कामों में नहीं शामिल होते। फिर भी हम जिस इलाके में रह रहे हैं, उसके आसपास की सामाजिक वास्तविकता को कला के माध्यम से संबोधित करने का हमारी यह एक छोटी सी कोशिश है।

नाटक एक रोचक और सशक्त माध्यम है। समाज की जटिलता और उससे जुड़े सवालों को एक साथ लाने का यह एक सुन्दर तरीका है। नाटक में क्या कहानी दर्शाने वाले हैं और कैसे? यह महत्वपूर्ण सवाल के पीछे कला और सामाजिक वास्तविकता के एक साथ यात्रा करने की बात है। इसमें यह जोड़ना चाहिए कि गांव में दिखाने वाले नाटक का स्वरूप क्या है? अभिनय और कहानी से ठीक से संवाद कर पायेंगे क्या? नवंबर के अनुभव ने कुछ हद तक इस सवाल से नजदीक में कुछ सफलता प्राप्त करने में हमें मदद की है। फिर भी आगे का सफर काफी बाकी है, यह हमारा मानना है।

अभी तक बालसमूह में तैयार हुए नाटक

सनकी सजा (1996)	–	निर्देशन : महेश बसेडिया
हड्डी (1998)	–	निर्देशन कमलेश सक्सेना
	–	संगीत जया नर्गीस
अब क्या होगा? (मई 1999)	–	निर्देशन गौरी डे
ये कैसे सरपंच (मई 1999)	–	निर्देशन गौरी डे
अब क्या होगा (नवंबर1999)	–	निर्देशन जॉनी कुट्टी
सुदामा के चावल (2000)	–	निर्देशन जॉनी कुट्टी
		संगीत राजेश विशनोइ

हमारे थियेटर में भारतीयता तब ही आयेगी जब वह गहराई से हमारे लोगों की जिंदगी से मतलब रखता है। बहुत से लोगों की गरीबी, सामाजिक और आर्थिक असमानता, हमारे ढाँचे में भ्रष्टाचार, राज सत्ता और पैसे का रिश्ता, व्यवस्थित तरीके से सांप्रदायिकता के खिलाफ बनने वाले रास्ते.....

..... ये सभी बातों का अस्तित्व हमारी परंपरा में नाच, गानों, मुखौटों बगैरा के साथ-साथ उपलब्ध है। क्या हमारा थियेटर इन सब के बारे में विश्लेषण, परीक्षा और रचना न करके अपने आप को भारतीय थियेटर बोल सकता है?